संपादकीय

बाकी सब इत्यादि थे...[1]

आजादी के पचहत्तर वर्ष पूरे होने पर हम इसे अमृत महोत्सव के रूप में स्मरण कर रहे हैं। स्वाधीनता संग्राम की अहमियत को समझने के क्रम में बीते पचहत्तर वर्षों में हमने प्रत्येक क्षेत्रों में गुणात्मक स्तर पर क्या प्रगति की है, इसका आत्मालोचन करना कहीं न कहीं इस महोत्सव का ध्येय है। सही मायने देखा जाय तो इस महोत्सव की सार्थकता भी इसी बात में निहित है। हम जानते हैं कि भाषा, साहित्य एवं सांस्कृतिक समृद्धि के कारण पूर्वोत्तर भारत अपनी विशिष्ट पहचान रखता है। यह विसंगति ही है कि साहित्यिक, सांस्कृतिक एवं ऐतिहासिक स्तर पर इतनी समृद्ध विरासत होने के बावजूद भारत का यह अभिन्न हिस्सा लिखित तौर पर इतिहास में उस रूप में दर्ज नहीं हो पाया, जितना होना चाहिए था।

स्वाधीनता आंदोलन में पूर्वोत्तर भारत की भूमिका बहुत ही अहम रही है। ध्यान देने योग्य है, स्वाधीनता संग्राम की महागाथाओं के जयघोष का आर्तनाद आज भी महात्मा गांधी, सुभाष चंद्र बोस, चंद्रशेखर आजाद, राजगुरु, भगत सिंह एवं सुखदेव इत्यादि तक आते-आते समाप्त हो जाता है। क्या कभी आपने इन जयघोषों में पूर्वोत्तर भारत के किसी सेनानी का नाम सुना है? शायद नहीं। पूर्वोत्तर भारत के सभी राज्य आजादी के संग्राम में समान रूप से सहभागी रहे हैं और इसका एक समृद्ध इतिहास रहा है। यह नाम इतिहासकारों की नजरों से कैसे वंचित रह गए, यह हमारे लिए चिंता और चिंतन का विषय है। इन महत्त्वपूर्ण नामों को 'इत्यादि' शब्द के भीतर समेट देना, कहीं न कहीं इतिहास को प्रश्नांकित करता है। यहाँ राजेश जोशी की कविता 'इत्यादि' सायास स्मरण हो आती है, वे लिखते हैं- "इत्यादि हर जगह शामिल थे पर उनके नाम कहीं भी/ शामिल नहीं हो पाते थे।" निश्चित रूप से इसके पीछे के कारकों का अन्वेषण करना, अनुसंधान के लिए एक महत्त्वपूर्ण विषय-क्षेत्र है।

वर्ष 2020 में प्रकाशन विभाग, सूचना और प्रसारण मंत्रालय, भारत सरकार के सहयोग से प्रकाशित स्वर्ण अनिल की पुस्तक 'पूर्वोत्तर भारत के स्वातंत्र्य वीर' उत्तर पूर्व के सेनानियों को समझने के लिए महत्त्वपूर्ण है। इस पुस्तक में डॉ. स्वर्ण अनिल ने पूर्वोत्तर भारत के 22 स्वतंत्रता सेनानियों की चर्चा की है। इस बीच पूर्वोत्तर भारत के सेनानियों को लेकर कुछ और भी महत्त्वपूर्ण अनुसंधान सामने आए हैं। हाल ही में सिक्किम में अध्यापन कार्य से संबद्ध डॉ. बिनोद भट्टराई और राजेन उपाध्याय ने

[1] संपादकीय का शीर्षक वरिष्ठ कवि राजेश जोशी की कविता 'इत्यादि' से उद्धृत है।

अपने अद्यतन अनुसंधान के जरिये सिक्किम के महत्त्वपूर्ण स्वतंत्रता सेनानी त्रिलोचन पोखरेल की विस्तृत चर्चा की है। यद्यपि छिटफुट तौर पर तो पूर्वोत्तर भारत के सेनानियों पर तो कई लेख उपलब्ध हैं, लेकिन स्वतंत्र रूप से मौलिक और प्रामाणिक कार्यों का आज भी अभाव है।

स्वर्ण अनिल के हवाले से कहें तो "भारत छोड़ो आंदोलन में पूर्वोत्तर के स्वतंत्रता सेनानियों की एक लंबी सूची है, जिसमें एक ओर 17 वर्षीय कनक लता बरुआ हैं तो दूसरी ओर 60 वर्षीय भोगेश्वरी फुकनानी और दोनों ने राष्ट्रीय ध्वज फहराने के लिए अपना बलिदान दे दिया। पुत्र मोह और अपने प्राणों का मोह छोड़कर मातृभूमि का चयन करने वाली मिजो रानी रौपुइलीयानी ब्रिटिश अफसरों की बर्बरता को अपने बेटे के साथ सहते हुए शहीद हुई, पर परतंत्रता नहीं स्वीकारी।" इसी क्रम में पूर्वोत्तर भारत के अलग-अलग क्षेत्रों से कुछ और भी नाम मसलन रजनी देवी, छमू देवी, ओंगबी, हेलेन लेप्चा एवं मोजे रीबा आदि का नाम प्रमुखता से लिया जा सकता है।

गौरतलब है, आजादी की लड़ाई में महिलाओं की भूमिका बहुत ही अहम रही है, लेकिन इतिहास के पन्नों से उनके नाम गायब हैं। स्वाधीनता आंदोलन के ऐतिहासिक अध्ययन के क्रम में यदि हम पूर्वोत्तर भारत के इतिहास को देखें तो इसमें पुरुषों और महिलाओं की समान भागीदारी रही है। एक प्रकार से देखें तो पूर्वोत्तर भारत का इतिहास स्वाधीनता आंदोलन में महिलाओं के हस्तक्षेप और समर्पण का मुकम्मल गवाह है।

इस आंदोलन में पूर्वोत्तर भारत के त्रिपुरा से जितेन पाल, शचिंद्र पाल सिंह, वीरेंद्र दत्त, वंशी ठाकुर, प्रभात राय, देव प्रसाद, सेनगुप्त, अब्दुल गफूर, यतींद्रनाथ आदि का नाम उल्लेखनीय है। 1930 के भारत छोड़ो आंदोलन में असम राज्य की भूमिका को नजरंदाज नहीं किया जा सकता। इनमें हेमराज बारदलै, कलाई कोछ, हेमराज बरा, तिलक डेका, लक्ष्मी हाजरिका, बलोसूथ, राउतराम कछारी, मदन बर्मन, गुणाभि पाटर, मुकुंद काकति तथा तिलेश्वरी बरुआ आदि प्रमुख रूप से शामिल थे। अरुणाचल प्रदेश में मिसमी संगठन का नेतृत्व कर रहे ताजी मिदेरिन ने इस संग्राम को गति दी। इसी प्रदेश में बापू नाम से ख़्यातिलब्ध मीजेरीबा संत की भूमिका अत्यंत उल्लेखनीय है। मणिपुर से टिकेन्द्रजीत वीर सिंह, पाओना ब्रजवासी, वीर बालक चिंलेनसना एवं रानी मां गाइदिन्ल्यू के समर्पण को आज भी लोग कृतज्ञता के साथ स्मरण करते हैं। प्रत्येक वर्ष 23 अप्रैल को खोंगजोम दिवस के रूप में यहाँ के लोग इन शूरवीरों को अत्यंत श्रद्धा के साथ याद करते हैं। इस आंदोलन में नागा जनजाति समूहों का योगदान स्मरणीय है। अपने त्याग और बलिदान के लिए याद किए जाने वालों में वीरों में जादोनांग की अहमियत को पूर्वोत्तर भारत का समाज आज भी आदर के साथ रेखांकित करता है। निश्चित रूप से इतिहास के पृष्ठों पर आज इन सेनानियों की उपस्थिति एवं महत्त्व को विस्तृत रूप में दर्ज करने की आवश्यकता है।

ISSN: 2582-6530

कोविड महामारी की भयावहता और उसके प्रभाव से सामाजिक स्तर पर बड़ी क्षति हुई है। कई जगहें हमेशा के लिए रिक्त हो गईं, जिनकी भरपाई कभी नहीं हो सकती। इन्हीं कारणों से कंचनजंघा पत्रिका का यह अंक विलंब से प्रकाशित हो रहा है, जिसके लिए हमें खेद है। पाठकों एवं लेखकों की ओर से हमें पूर्वोत्तर भारत से बाहर की भी अधिकाधिक सामग्री प्राप्त होती है, लेकिन कंचनजंघा पत्रिका के उद्देश्यों एवं इसकी सीमाओं को ध्यान में रखते हुए हम पूर्वोत्तर भारत से इतर सामग्री का प्रकाशन बहुत कम कर पाते हैं, इसका हमें खेद है। इस अंक की लगभग सामग्री उत्तर पूर्व की रचनाशीलता पर केंद्रित है। इस अंक के आलेख खंड में कई महत्त्वपूर्ण लेख हैं। अरुण नागरी पत्रिका पर केंद्रित देवराज का लेख अरुणाचल की हिंदी पत्रिकारिता और रमण शंडिल्य के साहित्यिक हस्तक्षेप को प्रमुखता से रेखांकित करता है। नेपाली साहित्य का आयामिक आंदोलन हिंदी पाठकों के लिए अनूठी सामग्री है। आगामी अंकों में हम अनुवाद खंड को और भी समृद्ध करने का प्रयास करेंगे। इस अंक के प्रत्येक खंड में पूर्वोत्तर भारत के अलग-अलग हिस्सों से विधागत विविधता के साथ सामग्रियों का समायोजन करने का प्रयास किया गया है। विश्वास है, आपको यह अंक पसंद आएगा। इसी आशा के साथ...

(संपादक)